3

क्विंटन स्किनर की व्याख्या पद्धति

सीमा दास

द फाउंडेशन ऑफ मॉर्डन पॉलिटिकल थॉट (1978) के लेखक क्विंटन स्किनर ने 1960 तथा 1970 के दशकों में पुरातन विधि द्वारा राजनीति के इतिहास के अध्ययन की कमियाँ उजागर करते हुए विद्वानों के बीच व्याख्या की पद्धति में पुनः रुचि पैदा की। इस दिशा में स्किनर जिन विद्वानों से प्रभावित हुए उनमें जॉन पॉकोक, जॉन डुन, लुडविग विटगेन्सटाइन, जे. एल. ऑस्टिन, जॉन आर. सर्ल और एच. पी. ग्राइस के नाम प्रमुख हैं। 1978 में 37 वर्ष की उम्र में वे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में राजनीतिशास्त्र के प्रोफेसर चुने गए। उनकी रुचि व्याख्या पद्धति में जागृत हुई क्योंकि वे प्रचलित उदारवादी तथा मार्क्सवादी व्याख्या पद्धति से असंतुष्ट थे। 1969 में उन्होंने लिखा कि प्रचलित ग्रांथिक (textual) एवं सांदर्भिक (contextual) तरीके अपर्याप्त हैं और एक नए सांदर्भिक तथा ऐतिहासिक तरीके से एक अधिक संवेदनशील व्याख्या पद्धति की आवश्यकता है।

मीनिंग एंड अंडरस्टेडिंग इन द हिस्ट्री ऑफ आइडियाज़

'मीनिंग एंड अन्डरस्टेडिंग इन द हिस्ट्री ऑफ आइडियाज़' लेख में क्विंटन स्किनर ने व्याख्या के विभिन्न उपागमों (approaches) की कमियों का व्यवस्थित रूप से विवेचन किया है। इस लेख को उन्होंने मुख्यतः दो भागों में बाँटा है: प्रथम भाग में, उन्होंने विचारों के इतिहास के शिक्षण विषय (discipline) की आलोचना की है और

Scanned with CamScanner

दूसरे भाग में, स्किनर अपना उपागम बताते हैं। उनके अनुसार, किसी भी ग्रंथ को समझने के लिए यह समझना ज़रूरी है कि ग्रंथ एक भाषिक कार्य की समष्टि (complex) है। इसलिए यह जानना ज़रूरी है कि लेखक इसे लिखते हुए क्या कर रहा है। ग्रंथ के बिंदु या विषय को 'परंपरा उत्प्रेरिक भाषिक संदर्भ' (convention governed linguistic context) में डालकर समझना चाहिए।

'मीनिंग एंड अन्डरस्टेडिंग इन द हिस्ट्री ऑफ आइडियाज़' लेख में स्किनर ग्रांथिक व्याख्या विधि की पूर्वधारणा (assumptions) पर प्रश्नचिह्न लगाते हैं। उनके अनुसार, इसके अंतर्गत विचारों के इतिहासकार का कार्य क्लासिक ग्रंथ का अध्ययन करना तथा विवेचन करना (interpret) करना है। इस प्रकार का इतिहास लिखना इसलिए महत्त्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि क्लासिक ग्रंथ में लिखित नैतिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा अन्य विचार 'सार्वजनिक विचार' के रूप में 'समयातीत विद्वता' (dateless wisdom) लिए हुए हैं। अतः हम इन 'समयातीत तत्त्वों' (timeless elements) का अन्वेषण कर इन्हें समझने तथा जानने से लाभान्वित हो सकते हैं। अर्थात इन ग्रंथों को अच्छी तरह समझने के लिए यह समझना ज़रूरी है कि इनमें मूलभूत संकल्पना (concepts) के विषय में तथा नैतिकता, राजनीति, धर्म एवं सामाजिक जीवन के विषय में क्या कहा गया है। दूसरे शब्दों में, ग्रांथिक विधि में हमसे यह अपेक्षा की जाती है कि हम इन क्लासिक ग्रंथों को इस प्रकार पढ़ें जिससे यह लगे कि वे समकालिक (contemporary) लेखकों द्वारा लिखे गए हैं। यदि हम उनकी सामाजिक परिस्थितियाँ या बौद्धिक संदर्भ का परीक्षण करने लगेंगे तो हम उन क्लासिक ग्रंथ के सर्वकालिक विवेक (dateless wisdom) को भूल जाएँगे तथा उनका पढ़ा जाना निरर्थक हो जाएगा।

क्विंटन स्किनर इन सारी पूर्वधारणाओं पर प्रश्नचिह्न लगाते हुए कहते हैं कि यदि संभव हो तो इन्हें अस्वीकार कर देना चाहिए। वे कहते हैं कि साहित्य की किताब हो अथवा दर्शन की, मुख्य प्रश्न एक ही है—किताब को समझने तथा व्याख्या करने की सही विधि क्या होनी चाहिए? दो तरह की विधियाँ प्रचलित हैं: पहली विधि के अनुसार किताब की राजनीतिक, धार्मिक तथा आर्थिक परिप्रेक्ष्य उसका अर्थ निर्धारित करता है तथा उसके समझने का प्रारूप प्रदान करता है; दूसरी विधि किताब की स्वायत्तता को उसे समझने के लिए आवश्यक मानती है। क्विंटन स्किनर दोनों विधियों को ग्रंथ (text) को समझने के लिए अपर्याप्त मानते हैं।

सबसे पहले क्विंटन स्किनर उस विधि की कमियों को उजागर करते हैं जो यह दावा करती है कि ग्रंथ शोध का स्वपर्याप्त विषय है। इसमें अध्ययन का विषय महान ग्रंथों में 'सर्वकालिक प्रश्न एवं उत्तर' खोजना तथा उनकी प्रासंगिकता का पता लगाना

Scanned with CamScanner

बन जाता है। क्विंटन स्किनर 'प्रतिमान की प्राथमिकता' के खतरे नैतिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं अन्य विचारों के इतिहास के संदर्भ में बताते हैं। वे कहते हैं कि इस प्रकार का अध्ययन ऐतिहासिक निरर्थकता पैदा करता है और फलतः हम जो पढ़ते हैं वह विचारों का इतिहास न बनकर विचारों की भ्रांति बन जाता है। अतः जिस प्रकार व्याख्याकार क्लासिक ग्रंथ की व्याख्या करते आए हैं उसमें हम ऐतिहासिक निरर्थकता पाते हैं। फलतः हमें कई प्रकार की भ्रांतियाँ देखने को मिलती हैं।

सबसे अधिक भ्रांति तब पैदा होती है जब विचारों के इतिहासकार (टीकाकार) क्लासिक लेखकों से यह अपेक्षा करता है कि वे विषय विशेष पर कोई न कोई सिद्धांत (doctrine) प्रतिपादित करेंगे। फलतः 'सिद्धांतों की भ्रांति' पैदा होती है। पहली भ्रांति तब पैदा होती है जब क्लासिकं लेखक द्वारा यत्र-तत्र लिखी गई संयोगगत टिप्पणी को टीकाकार किसी अपेक्षित विषय में परिवर्तित कर देता है। फलस्वरूप, दो प्रकार की भ्रांतियाँ उत्पन्न होती हैं। पहली का संबंध 'बौद्धिक जीवन-गाथाएँ' तथा चिंतन के संक्षिप्त इतिहास से है और दूसरी का संबंध 'विचारों के विकास' से है। 'बौद्धिक जीवन गाथाओं' के केंद्र में चिंतक रहता है जबकि 'विचारों के विकास' के केंद्र में एकक विचार का विकास होता है। 'बौद्धिक जीवनगाथाओं' के साथ सबसे बड़ा खतरा कालदोष (anachronism) का होता है। शब्दों की समानता के बल पर कोई विचार क्लासिक ग्रंथकार के विचार बना दिए जाते हैं जबकि सच तो यह होता है कि उस क्लासिक रचनाकार ने उस प्रकार से शायद ही सोचा हो। उदाहरण के लिए, मार्सिलियस ऑफ पाडुआ अपनी किताब *डिफेंसर ऑफ द पीस* में अरस्तू की तरह शासक के कार्यपालिका वाली भूमिका पर टिप्पणी करते हैं और इसकी तुलना सार्वभौम प्रजा के विधायिका स्वरूप भूमिका से करते हैं। अमेरीकी स्वतंत्रता के बाद लिखते हुए आधुनिक टीकाकार, जो कि इस बात से अवगत हैं कि राजनीतिक स्वतंत्रता के लिए कार्यपालिका और विधायिका का अलगाव एक अनिवार्य शर्त है, जब मार्सिलियस की किताब पढ़ता है तो एक भ्रामक विवाद पैदा करता है कि क्या मार्सिलियस 'कार्यपालिका और विधायिका के अलगाव' के सिद्धांत के जन्मदाता हैं? सच बात तो यह है कि मार्सिलियस के उपर्युक्त विचार अरस्तु के *पॉलिटिक्स* के चतुर्थ खंड से लिया गया है और वे राजनीतिक स्वतंत्रता के प्रश्न से सर्वथा अनभिज्ञ थे। इसी प्रकार का कालदोष हमें सर एडवर्ड कोक के बॉनहेम केस के संदर्भ में भी दिखता है जब वे कहते हैं कि इंग्लैंड का 'कॉमन लॉ' (Common Law) कभी-कभी संविदाओं पर हावी हो सकता है। आधुनिक अमेरिकी विवेचक इसे न्यायिक पुनरावलोकन के सिद्धांत के प्रवर्त्तक के रूप में देखते हैं। सच तो यह है कि सत्रहवीं सदी में लिख रहे सर एडवर्ड कोक को इस सिद्धांत के विषय में कोई ज्ञान नहीं था।

Scanned with CamScanner

इस विचार का संदर्भ था एक राजनीतिज्ञ की तरह कोक का जेम्स को सुझाव देना कि कानून का परिभाषिक गुण रिवाज/प्रथा होना चाहिए न कि सार्वभौम की इच्छा। टीकाकार द्वारा इस संदर्भ का ध्यान नहीं रखा जाता है और यह भी नहीं देखा जाता है कि क्या सर एडवर्ड कोक की मंशा न्यायिक पुनरावलोकन के सिद्धांत को प्रतिपादित करने की रही थी?

इसके अतिरिक्त, एक अन्य प्रकार का भ्रम पैदा होता है जिसके अंतर्गत ग्रंथकार प्रत्यक्ष रूप से कुछ और बोल रहा हो, पर उसकी मंशा कुछ और थी। उदाहरण के तौर पर, *द लॉज ऑफ एक्लेसियास्टिकल्स पॉलिटी* में रिचर्ड हूकर मनुष्य की प्राकृतिक सामाजिकता पर विचार प्रकट करते हैं। स्किनर के अनुसार, हूकर की मंशा केवल चर्च के ईश्वरजनित प्रादुर्भाव से राज्य के सांसारिक प्रादुर्भाव की भिन्नता दिखाने की थी। परंतु आधुनिक टीकाकार जो हूकर को जॉन लॉक के ऊपर की पंक्ति में देखते हैं, वे हूकर के उपर्युक्त विचारों को 'सामाजिक समझौता' के सिद्धांत में परिवर्तित करने से नहीं चूकते। इसी प्रकार, जॉन लॉक अपनी पुस्तक *सेकेंड ट्रीटीज* में 'ट्रस्टीशिप' पर एक या दो बिंदु प्रकीर्ण टिप्पणी (scattered remarks) की तरह लिखते हैं। परंतु आधुनिक टीकाकार जो कि लॉक को 'सहमति द्वारा सरकार' (government by consent) की श्रृंखला में देखते हैं, वे प्रकीर्ण टिप्पणियों को इकट्ठा करके लॉक का 'राजनीतिक ट्रस्ट' का सिद्धांत प्रतिपादित कर देते हैं।

इसी प्रकार का प्रतिमान (paradigm) विचारों के इतिहास पर भी लागू होता है। इसमें किसी सिद्धांत को इतिहास के प्रत्येक क्षेत्र में खोजा जाता है। समानता का सिद्धांत हो या उन्नति का या फिर सामाजिक अनुबंध का या शक्ति के अलगाव का, सिद्धांत का आदर्श रूप खोजा जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कोई विशेष विचार या सिद्धांत इतिहास में सर्वदा उपस्थित रहा हो और कई चिंतक उन्हें उजागर करने में सफल रहे हों। यहाँ पर दो प्रकार की ऐतिहासिक निरर्थकता सामने आती है। पहला, आदर्श रूप में सिद्धांत खोजना एक ऐसे इतिहास को जन्म देती है जिसमें आने वाले सिद्धांत का पूर्वानुमान किया जाता है और लेखक को उसके सूक्ष्म दृष्टि के लिए श्रेय दिया जाता है। इस प्रकार माना जाता है कि मार्सिलियस की रचना में मैक्यावलि का पूर्वाभास होता है और मैक्यावलि की सराहना की जाती है कि उसने कार्ल मार्क्स के लिए ज़मीन तैयार की आदि। यह भी माना जाता है कि मांटेस्क्यू ने संपूर्ण रोजगार और कल्याणकारी राज्य के विचार का पूर्वाभास किया और मैक्यावलि ने आधुनिक राजनीति का।

दूसरे प्रकार की निरर्थकता तब पैदा होती है जब यह देखा जाता है कि एक विचार किसी एक समय उभरा तथा किसी विशेष लेखक के कार्य में दिखा। उदाहरण के

Scanned with CamScanner

लिए, 'शक्ति का अलगाव' का विचार। क्या यह विचार जॉर्ज बुकनान के पुस्तक में था या इस विचार को उसने पूरी तरह से व्यक्त नहीं किया? एक और भ्रांति यह दिखती है कि क्लासिक ग्रंथकार की इसलिए आलोचना की जाती है क्योंकि यह पहले से ही पूर्वानुमान कर लिया जाता है कि लेखक की मंशानुसार उसकी पुस्तक एक विषय विशेष पर सबसे क्रमबद्ध कार्य रहा होगा। उदाहरण के लिए, यह पहले से ही समझ लेना कि *लाज* में हूकर 'राजनीतिक बाध्यता' (political obligation) के आधार को प्रतिपादित करना चाह रहे होंगे, इसलिए हूकर के राजनीतिक विचार की आलोचना की जाती है कि उसने पूर्ण शक्ति का खंडन नहीं किया। उसी प्रकार यह पहले से ही पूर्वानुमान किया जाता है कि *द प्रिंस* में मैक्यावलि का एक मकसद था 'राजनीति में मानव की विशेषताएँ' प्रतिपादित करना। तब, एक आधुनिक राजनीतिशास्त्र के ज्ञाता के लिए यह कहना आसान हो जाता है कि मैक्यावलि का प्रयास एकमुखी और अक्रमबद्ध था। कई बार क्लासिक ग्रंथकार की आलोचना की जाती है कि उसने अपनी रचना के साथ न्याय नहीं किया क्योंकि उसने किसी अनिवार्य विषय पर कोई सैद्धांतिक बात नहीं कही। उदाहरण के तौर पर, राजनीतिक सिद्धांत में 'निर्णय लेने' तथा 'जनमत' की भूमिका, ये सवाल आधुनिक प्रजातांत्रिक राजनीतिक सिद्धांत के केंद्र में हैं जबकि ये सवाल आधुनिक प्रजातंत्र पर पहले लिखने वाले सिद्धांतकारों के समक्ष नहीं थे। परंतु, यह भी पाया जाता है कि टीकाकार अथवा व्याख्याकार प्लेटो के *रिपब्लिक* की आलोचना करते हैं कि उसमें 'जनमत' की जगह नहीं है तथा जॉन लॉक के *टू ट्रीटीज* की आलोचना करते हैं कि उसने सर्वव्यापक मताधिकार के विषय में अपने विचार स्पष्ट नहीं किए।

एक अन्य प्रकार की भ्रांति तब पैदा होती है जब टीकाकार क्लासिक ग्रंथ में प्रतिबद्धता (consistency) तथा संबद्धता (coherence) ढूँढ़ने लगता है। यदि हूकर के *लॉज* में कोई 'संबद्धता' नहीं मिलती है तो संबद्धता ढूँढ़ी जाती है। उसी प्रकार यदि हॉब्स के राजनीतिक चिंतन के केंद्रीय कथ्य के विषय में कोई संशय है तो टीकाकार का यह कर्त्तव्य बन जाता है कि *लेवियाथन* को तब तक पढ़ा जाए जब तक उसमें कोई संबद्धता नज़र न आ जाए। यहाँ पर लेखक की मंशा को दरकिनार कर दिया जाता है। क्विंटन स्किनर के अनुसार यह पूर्वप्रयोग की भ्रांति (mythology of prolepsis) की वजह से भी होता है। उदाहरण के लिए, रूसो की यह व्याख्या की जाती है कि रूसो के राजनीतिक विचार ने सर्वसत्तावाद एवं प्रजातांत्रिक राष्ट्रीय राज्य का दार्शनिक औचित्य का प्रतिपादन किया है, इसलिए रूसो की मंशा भी यही रही होगी और रूसो का योगदान सर्वसत्तावाद के उदय पर रहा है। उसी प्रकार, मैक्यावलि की व्याख्या की जाती है कि वह आधुनिक संसार के द्वार पर खड़ा है।

Scanned with CamScanner